Volume 2; Issue 3

July to September 2025

E-ISSN: 3048-6742

Sanskriti-Samvahika

संस्कृति-संवाहिका

Peer Review Indexed Refereed Journal

Quarterly Journal

Editor-in-Chief

Dr. Ashwini Devi

Sanskriti-Samvahika संस्कृति-संवाहिका

E-ISSN: 3048-6742
https://sanskritisamvahika.in
Volume 2; Issue 3; July to September, 2025; Page No. 19-25
Peer Review, Indexed and Refereed Journal

मानवता की खोज में असमर्थदाता

रंजीत कुमार पुष्पाकर
शोध छात्र
हिंदी विभाग,
ईश्वर शरण डिग्री कॉलेज, प्रयागराज

शोध सारांश

हिदी साहित्य के इतिहास में कहानी एक मुख्य विधा के रूप में विद्यमान है। 19वीं सदी में इस विधा का विकास मनुष्य के जन्म के साथ ही कहानी का भी जन्म हुआ और कहानी कहना तथा सुनना मानव का आदिम स्वभाव बन गया। इसी कारण से प्रत्येक सभ्य तथा असभ्य समाज में कहानी पाई जाती है। हमारे देश में कहानियों की बड़ी लंबी और संपन्न परंपरा रही है। इस कहानी में उनके कवि हृदय के साथ-साथ समाजवाद की भावना भी साकार हो उठी है। यह कहानी मानवता की खोज की कहानी है। अभाव में व्यक्ति प्रायः सहृदय होता है। उसके मन में किसी प्रकार की घृणा, ईर्ष्या, द्वेष आदि विकृतियों का स्थान नहीं होता है। वह मानवीय भावनाओं से पूर्ण होता है। सुखिया के रूप में बाबा नागार्जुन मानवता की खोज करते हैं जो भरपेट रोटी न मिलने के बावजूद किसी के प्रति ईर्ष्या की भावना से ग्रसित नहीं है। वह अपनी बीमार मां की सेवा करने के साथ-साथ खालिस पानी पिलाकर ही सही आतिथ्य सत्कार करना भी जानती है।

मुख्य शब्द: मानवत, खोज, असमर्थदाता

हिदी साहित्य के इतिहास में कहानी एक मुख्य विधा के रूप में विद्यमान है। 19वीं सदी में इस विधा का विकास मनुष्य के जन्म के साथ ही कहानी का भी जन्म हुआ और कहानी कहना तथा सुनना मानव का आदिम स्वभाव बन गया। इसी कारण से प्रत्येक सभ्य तथा असभ्य समाज में कहानी पाई जाती है। हमारे देश में कहानियों की बड़ी लंबी और संपन्न परंपरा रही है। प्राचीन काल मे सदियों तक प्रचलित वीरों तथा राजाओं के शौर्य, प्रेम,न्याय, वैराग्य, साहस, समद्री यात्रा में पर्वतीय प्रदेशों में प्राणियों के अस्तित्व की कथाएं जिनका कथानक घटना प्रधान हुआ करता था, यह भी कहानी के ही रूप हैं।

अमेरिका के कवि, आलोचक, कथाकार 'एडगर एलन पो' के अनुसार कहानी की परिभाषा इस प्रकार है- 'कहानी वह छोटी आख्यानात्मक रचना है जिसे एक बैठक में पढ़ा जा सके। जो पाठक पर एक सामान्य प्रभाव उत्पन्न करने के लिए लिखी गई हो जिसमें उसे प्रभाव को उत्पन्न करने में सहायक तत्वों के अतिरिक्त और कुछ ना हो और जो अपने आप में पूर्ण हो। हिदी कहानी मानव जीवन के विस्ततृ इतिहास की लघु अभिव्यक्ति है। यह जीवन के किसी एक पक्ष, किसी घटना विशेष को प्रकट करती है। कहानी कला की वास्तविक परिभाषा समझने के लिए हमें इसकी मूल आत्मा से परिचय प्राप्त करना चाहिए। जिसके धरातल से इसकी सृष्टि होती है। कहानी सृष्टि की दो प्रेरणा होती है, या तो कोई संवेग, घटना अथवा समस्या किसी भी संवेदनशील लेखक को कहानी लिखने को विवश करती है या उसकी कोई मनोवैज्ञानिक गति अथवा आत्मानुभूति उसे कहानी बध्द करने को प्रेरित करती है। इस तरह दोनों रूपों में एक भाव प्रधान या अनुभव के द्वारा लेखक अपने पाठक के ऊपर एक आतंरिक प्रभाव डालना चाहता है। इसके लिए वह उसके मन पर पहले से ही निहित संस्कार को अपनी शब्दगत प्रेरणा के द्वारा कुरेदता है। जिसके माध्यम से पाठक या श्रोता वर्तमान में रहकर भी किसी विशेष समय, परिस्थिति या घटना समय में चला जाता है और उसके बहाव में बहने लगता है। इसे तदाकार स्थिति कहा जाता है। हिंदी साहित्य में अनेक कथाकार हुए हैं जिन्होंने अपनी रचना से भारतीय संस्कृति, सभ्यता व उसके रहन सहन को बहुत बारीकी से रुपायित किया है। इन साहित्यकारों ने ग्रामीण जन जीवन को अपनी रचनाओं में तरजीह दी है। इन कारणों की पड़ताल करना अभी तक तो संभव नहीं हो पाया है। महात्मा गांधी ने कहा था कि भारत गांवों में बसता है। गांव की पगडंडियां भारत की धमनियां हैं। और वहां पर बसने वाले साधारण जन उसकी चेतना के वाहक हैं। उनमें अभी भी स्नेह है भाईचारा है आपसी सौहार्द है जो अन्य ज़गह पर अब गुज़रे ज़माने की बात हो गई है।

गांव में धार्मिक वैमनस्य भी नहीं है। हिंदी पट्टी की बात करें तो इस क्षेत्र के लोग अधिक प्रतिस्पर्धा वाले नहीं होते हैं वेहिंदी साहित्य में अनेक कथाकार हुए हैं जिन्होंने अपनी रचना से भारतीय संस्कृति, सभ्यता व उसके रहन सहन को बहुत बारीकी से रुपायित किया है। इन साहित्यकारों ने ग्रामीण जन जीवन को अपनी रचनाओं में तरजीह दी है। इन कारणों की पड़ताल करना अभी तक तो संभव नहीं हो पाया है। महात्मा गांधी ने कहा था कि भारत गांवों में बसता है। गांव की पगडंडियां भारत की धमनियां हैं। और वहां पर बसने वाले साधारण जन उसकी चेतना के वाहक हैं। उनमें अभी भी स्नेह है भाईचारा है आपसी सौहार्द है जो अन्य ज़गह पर अब गुज़रे ज़माने की बात हो गई है। गांव में धार्मिक वैमनस्य भी नहीं है। हिंदी पट्टी की बात करें तो इस क्षेत्र के लोग अधिक प्रतिस्पर्धा वाले नहीं होते हैं वे सादा जीवन उच्च विचार की अवधारणा को साकार करते हैं। हिंदी साहित्य में एक समय ऐसा था जब खांटी देशीपन को साहित्य में स्थान मिला और इसको प्रतिस्थापित किया फणीश्वरनाथ रेणु जी ने। मैला आंचल से इसकी शुरुआत मानी जाती है। यदि बहस पर जाएं तो शिवपूजन सहाय का देहाती दुनिया इस विचार से प्रेरित पहली रचना मानी जानी चाहिए पर आलोचक मैला आंचल से ही इसकी शुरुआत मानते हैं।

आंचलिक रचनाओं में ग्रामीण समाज का रेशा रेशा वर्णित कर दिया गया। इस रचना के प्रकाशन के साथ ही यह चर्चा चल पड़ी कि आंचलिक साहित्य किसे कहा जाय..? इस संदर्भ में भी जब विवाद होने लगा तो आंचलिकता के मापदंड निर्धारित कर दिए गए। अब कोई भी साहित्यकार एक विशेष स्थान से जुड़ा रहकर आंचलिक साहित्य की रचना नहीं कर सकता था। उसके लिए उसे नया विषय, नई ज़गह, नए संदर्भ चाहिए थे जो निश्चित रूप से एक ज़गह पर रहकर संभव नहीं था। बाबा नागार्जुन घुमक्कड़ साहित्यकार कहे जाते हैं। वह कभी भी एक ज़गह पर टिककर नहीं रहे हमेशा भारतीय संस्कृति को अपने घुमक्कड़ी जिज्ञासा से टटोलते रहे। नागार्जुन मूलतः कवि हैं। कवि हृदय से लबालब जब वह गांव की बलखाती पगडंडियों पर सधे कदम से चलते थे, तो मानो धान व गेहूं की फसलें उनकी आहट से सांगीतिक ध्वनि उत्पन्न करने लगती हैं जैसे उनका सहचर उनके बीच लौट आया है तभी तो बाबा नागार्जुन फसलों की कटाई के समय हंसिये की सुप्..सुप्.., सप्..सप्.. की ध्वनि सुनकर आह्लादित होते हैं। फसल की कटान को कटान के रूप में नहीं बल्कि वह उसे पुनरागमन के रूप में देखते हैं। कवि हृदय जब खेत की माटी से इतनी गहराई से जुड़ा हुआ है तो मानवीय प्राणियों से भी किस संवेदनात्मक स्तर पर जुड़ा होगा इसका अंदाजा लगाया जा सकता है।

नागार्जुन घुमक्कड़-त्रई के आधार स्तंभ हैं। ना जाने कहां-कहां का चक्कर लगाया होगा बाबा जी ने, जो हमारी नजरों में आ गया वह तो ठीक जो नहीं आया वह अनदेखा ही रह गया है। कुछ अपवादों को छोड़ दिया जाए तो साहित्यकार और अर्थहीनता का जैसे चोली-दामन का साथ रहा है। बड़े साहित्यकारों ने आर्थिक अभाव में ही जीवन गुजारा। नागार्जुन, निराला सरीखे साहित्यकारों की आर्थिक विपन्नता इसका ज्वलंत उदाहरण है। महाकवि निराला भी गद्य रचना की ओर इसी कारण उन्मुख हुए थे, कि वह उसमें मिले धन से जरूरतमंदों की सहायता कर सकें।

बाबा नागार्जुन ने अपने इसी प्रकार के अनुभव को कलमबद्ध किया है अक्टूबर 1936 में 'दीपक पत्रिका' में प्रकाशित उनकी आत्मकथात्मक कहानी 'असमर्थदाता' मानवता की खोज की कहानी है, जिसमें वह निरंतर शोषित समाज की बदहाली को बयां करते हैं। ऐतिहासिकता पर दृष्टिपात करें तो यह पराधीन भारत की कहानी है। आजादी के लगभग एक दशक पहले भारतीय समाज की क्या दशा थी इस कहानी में हम यह बखूबी देख सकते हैं। साहित्यिक दृष्टि से वह छायावाद के अवसान का समय था, जिसमें वैयक्तिकता को प्रतिस्थापित किया गया था। 'मैंने मैं शैली अपनाई, देखा एक दुखी निज भाई' इस दुख की व्याप्ति सर्वत्र थी। खुशी सिर्फ चंद लोगों को ही नसीब थी।

ब्रिटिश साम्राज्य ने घरेलू उद्योग को नष्ट कर दिया था। जनता दाने-दाने को मोहताज थी किंतु भारतीय जनमानस की अदम्य जिजीविषा उसे बचाए हुए थी। बच्चे खाली पेट और अधखुले आकाश के नीचे रात व्यतीत करने को मजबूर थे। 'हट जा, दूर हो, इस तरह अपनी रंजीदगी तो जाहिर कर दी लेकिन यह साहस नहीं हुआ कि उसे झकझोर कर आगे बढ़ जाऊं'। (कहानी असमर्थदाता, नागार्जुन रचनावली पृष्ठ 297,भाग 6)

संभवतः रचनाकार कहीं यात्रा पर निकला है, विलंब हो जाने की आशंका से तनिक जल्दी-जल्दी चलना चाहता है किंतु उस अनाथा का कारुणिक चेहरा और दयनीय आंखें उसे बढ़ने नहीं दे रही हैं। किसी देश के बच्चे और युवा उस देश का भविष्य होते हैं जब वहीं राहगीरों के समक्ष पेट की क्षुधा शांत करने के लिए हाथ फैलाने लगे तो उसे देश का भविष्य क्या होगा.? उस बच्ची की वेदना मिश्रित आवाज से नागार्जुन द्रवीभूत हो जाते हैं। वह बच्ची सहृदय भी है। जब वह देखती है कि इकन्नी मिलने की आशा से उसकी बाकी सहचरियां भी आ धमकती हैं तो वह बड़ी होशियारी से वहां से सबको हटा ले जाती है। वह ये बात समझती है कि इस वृद्ध की पोटली में आशीर्वाद के सिवा इकन्नियों की संख्या बहुत कम ही होगी और जैसे ही सभी वहां से दूसरी ओर चली जाती हैं वह फिर अपनी आशापूरित निगाहों के साथ उसे वृद्ध के पास वापस आ जाती है। पटाक्षेप के बाद खेल फिर शुरू हो जाता है। बच्ची

कुछ पा जाने की आशा से हाथ पसारती है और राहगीर बहुत कुछ ना दे पाने के संकोच से शर्मिंदा होता है। अंततः उस बच्ची को इकन्नी पकड़ाते राहगीर खुद के गरीब होने की भी घोषणा कर देता है। 'ले अब आइंदा तंग मत करना मैं तो खुद गरीब हूं'। (वही पृष्ठ 298)

कड़ाके की सर्दी में गुनगुनी धूप सभी को सुहाती है पर हम उसे डिबिया में नहीं बंद कर सकते हैं। हम देना तो चाहते हैं पर जब आवश्यकता से अधिक उपलब्ध ही नहीं होता तो क्या देना किसे देना.? एक किंवदंती है कि किसी समय निराला जी कहीं से पुरस्कार स्वरूप पाँच रुपये पाकर वापस अपनी कोठरी की तरफ लौट रहे थे, रास्ते में ठिठुरन भरी सर्दी में एक भिखारी दिखा निराला जी ने उससे पूछा कि अगर मैं तुम्हें चार आने दूं तो तुम क्या करोगे.? उसने कहा कि मैं कल फिर भीख नहीं मांगूंगा। निराला जी ने कहा कि अगर एक रुपये दूं तो, भिखारी ने जवाब दिया फिर मैं तीन दिन तक भीख नहीं मांगूंगा। निराला जी ने कहा अगर तुम्हें पाँच रुपये मिल जाए तो उस भिखारी ने कहा फिर मैं कभी भी भीख नहीं मांगूंगा। निराला जी ने अपने पुरस्कार के पाँच रुपये बिना विलंब निकाल कर उस भिखारी को दे दिया और खाली हाथ घर लौट गए। देने से हम खाली नहीं होते, बल्कि और भर जाते हैं, भावों से करुणा से और संवेदना से। इकन्नी देकर राहगीर भी भर गया था उसका हृदय उस बच्ची से जुड़ चुका था। राहगीर को उस बच्ची के बारे में और अधिक जानने की इच्छा बलवती हुई और वह गंतव्य को ना जाकर अनायास ही उस बच्ची के पीछे-पीछे चल पड़ा और आवाज देने लगा जैसे उसकी बच्ची से वर्षों की पहचान हो।

सुखिया उन्हें अपनी अरधंग झोपड़ी में ले जाती है जिससे आधा आकाश दिखता है वहीं एक टूटी चारपाई पर उसकी मां चिथड़ों के ढेर ओढ़े लेटी हुई है। वह सफेदपोश राहगीर को देखकर हक्का-बक्का रह जाती है। मलिन बस्तियों में ऐसे लोगों का जाना नहीं ही होता है। वह दृश्य सुखिया की मां के लिए अप्रत्याशित होता है। अपनी स्थिति की हीनताबोध की भावना से भरकर वह बोल उठती है। 'सुक्खो इन्हें इस नर्क में क्यों ले आई'।(वही पृष्ठ 299)
अभाव की टीस बहुत ही त्रासदपूर्ण होती है। अपनी बीमारी में हाल-चाल पूछने आए आगंतुक को ठीक से बैठा भी न पाने की पीड़ा कितनी गहरी रही होगी। 'अतिथि देवो भवः' की भारतीय संस्कृति उसकी आवभगत ना कर पाने का दुःख सबसे बड़ा होता है। यहां पर राहगीर की भावना ही सुखिया के साथ तदाकार हो जाती है, जहां छोटी सी बच्ची खेलने और स्कूल जाने की उम्र में अपने नाजुक कंधों पर परिवार ढोने का प्रयास कर रही है। इसमें उसकी बीमार मां भी है।

उसकी मां कहती है की सुखिया को कोई काम नहीं आता है अभी उसने भीख मांगना भी नहीं सीखा है, जैसे भीख मांगना काम सीखने की आरंभिक कड़ी हो। ध्यातव्य है कि तत्कालीन समाज में भ्रष्टाचार और बेरोजगारी के मारे युवा दर-दर की ठोकरें खा रहे थे। इस माहौल में सुखिया को काम सिखाने वाला कौन होता। ईसाई मिशनरियों द्वारा कुछ प्रगति शील योजनाएं चलाई जा रही थी, किंतु उसका मुख्य उद्देश्य धर्म परिवर्तन ही रहा। समाज सुधार बहुत गौड़ पक्ष था। आर्थिक विपन्न लोगों के पास धर्म ही एकमात्र पूंजी होती है, उसे छोड़कर वह किस तरह जी पाएंगे कहा नहीं जा सकता है। सुखिया के पास भी आगंतुक की आवभगत के लिए कुछ नहीं था। वह टूटे हुए घड़े में ताजा पानी लाती है और प्रथमतः अपनी मां से ही पूछती है। सूखे पानी के लिए सीधे आगंतुक से कैसे कह देती।

इसी समय मिल का भोंपू बजने लगता है जैसे वह उस घोर गरीबी और अभाव की पीड़ा से व्यथित हो आर्तनाद कर रहा हो।

भावावेग में जब जिह्वा मौन हो जाती है तो आंखें बरस पड़ती हैं। हृदय में बोझ बना दुःख आँसुओं के सहारे बहकर निकल जाता है। मन हल्का हो जाता है। भले ही दुख कम ना हुआ हो पर उसे सहन करने की शक्ति अवश्य आ जाती है। राहगीर ने अपनी पोटली जिसमें एक रुपये का सिक्का और एक दुअन्नी थी, उस अभागन सुखिया को दे आया था आते वक्त उसने उसकी खूँट में अपने आंसुओं की बूंदे भी पोछ ली थी जैसे वह उसे हमेशा के लिए दुआएं दे रहा हो। अब वह भी खाली ही था। सुखिया को भी बहुत अधिक नहीं मिला था किंतु उस अभाव के समय में किसी को कुछ दे पाने की भावना प्रधान हो उठी है। यही तो भारतीय जनमानस की उत्कृष्ट जिजीविषा है। जब हमारे पास कुछ भी नहीं होता है तो आशा और उम्मीद के चंद लफ्ज़ हमें बड़े से बड़ा कार्य करने को प्रेरित करते हैं। वह हमें हिम्मत बंधाते हैं, हौसला देते हैं। बाबा नागार्जुन की कहानी इसी दाता की भावना का प्रस्तुतीकरण है। हमारे पास भले ही बहुत थोड़ा है पर वह उसका है जिसकी उसे सख्त जरूरत है। इस कहानी में उनके कवि हृदय के साथ-साथ समाजवाद की भावना भी साकार हो उठी है। यह कहानी मानवता की खोज की कहानी है। अभाव में व्यक्ति प्रायः सहृदय होता है। उसके मन में किसी प्रकार की घृणा, ईर्ष्या, द्वेष आदि विकृतियों का स्थान नहीं होता है। वह मानवीय भावनाओं से पूर्ण होता है। सुखिया के रूप में बाबा नागार्जुन मानवता की खोज करते हैं जो भरपेट रोटी न मिलने के बावजूद किसी के प्रति ईर्ष्या की भावना से ग्रसित नहीं है। वह अपनी बीमार मां की सेवा करने के साथ-साथ खालिस पानी पिलाकर ही सही आतिथ्य सत्कार करना भी जानती है।

संदर्भ ग्रंथ

1- नागार्जुन रचनावली, संपादक- शोभाकांत, भाग-06, राजकमल प्रकाशन।

2- नागार्जुन अंतरंग और सृजनकर्म, संपादक मुरली मनोहर प्रसाद सिंह, चंचल चौहान, लोकभारती प्रकाशन।

3- नागार्जुन अनभिजात का क्लासिक, विजय बहादुर सिंह, वाणी प्रकाशन।

4- नई कहानी की भूमिका, कमलेश्वर, राजकमल प्रकाशन।

5- हिंदी के आंचलिक उपन्यास एवं उपन्यासकार, फ़णीश सिंह, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन।

6- हिंदी कहानियों की शिल्प विधि का विकास, लक्ष्मीनारायण लाल, लोकभारती प्रकाशन।